शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 दिसम्बर 2012

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अनुवाद का महत्त्व एवं प्रासंगिकता

डॉ. जोगिन्द्र कुमार यादव
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू)
क्षेत्रीय केन्द्र, चण्डीगढ़

शोध संक्षेप

भारत में अनुवाद की परंपरा पुरानी है। किसी एक भाषा की सामग्री का दूसरी भाषा में रूपान्तर करने को 'अनुवाद' कहा जाता है। संभवत मानव जन्म के साथ ही अनुवाद का जन्म हुआ। मनुष्य की भावनाओं की अभिव्यक्ति की अकुलाहट ने ही अनुवाद को जन्म दिया। प्रस्तुत शोध पत्र में जहां अनुवाद के अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप तथा विभिन्न समस्याओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है वहीं अनुवाद एवं भाषाओं के बारे में सरकार की नीतियों एवं निर्देशों का उल्लेख करते हुए इस कला की संभावनाओं एवं महत्त्व पर भी प्रकाश डाला गया है। आज अनुवाद प्रयोजन की दृष्टि से बहुमुखी और बहुआयामी बन चुका है। अनुवाद अन्य भाषा और मानव समुदाय में संचित विकसित ज्ञान–विज्ञान के आयात का माध्यम बन गया है। यह आज देश–विदेश के राजनीतिक जीवन की अनिवार्यता भी बन गया है। अनुवाद का भारत जैसे देश में बहुत ही महत्त्व है और बदलते वैश्विक परिदृश्य में तो अनुवाद के साथ–साथ अनुवादकों की भूमिका भी काफी बढ़ गई है। अनुवाद राष्ट्रीयता ही नहीं मानवता तथा विश्वबंधुत्व की स्थापना के लिए अपनी भूमिका का निर्वाह करता है। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं कुछ बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्दः
मूल या स्रोत भाषा – जिस भाषा में अनुवाद अपेक्षित है; लक्ष्य भाषा– जिसमें अनुवाद किया जाता है; अनुवादक– दुभाषिया; बैबेल – हड़बड़ी, खलबली।

प्रस्तावनाः

किसी एक भाषा की सामग्री दूसरी भाषा में रूपांतर करने को 'अनुवाद' कहा जाता है। भाषा का अनुवाद से महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध है। यानि मूल भाषा या स्रोत भाषा का लक्ष्य भाषा में रूपांतर करना ही अनुवाद है। अनुवाद कला का प्रारम्भ किस काल से हुआ, यह कोई नहीं कह सकता। लिखित रूप में अनुवाद का समय आंका जा सकता है, किंतु अनुवाद का मौखिक रूप बहुत पुराना है। संस्कृत साहित्य में अनुवाद का प्रयोग मिलता है। वेद, पुराण आदि में अनुवाद शब्द का प्रयोग 'पुनः कथन' के अर्थ में मिलता है। पुनः कथन यानि पहले कही गई बात को फिर से कहना। अनुवाद में हम एक भाषा में कही गई बात को उसके कहे जाने के बाद दूसरी भाषा में कहते हैं। ठीक इसी प्रकार लिखित अनुवाद में एक भाषा में लिखी गई रचना को अन्य भाषा में फिर से लिखना या रूपांतर करने को अनुवाद कहा जाता है। एक भाषा में व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में व्यक्त करना अनुवाद का कार्य है। भाषा के दो रूप हमारे सामने हैं– मौखिक रूप और लिखित रूप। आमतौर पर अनुवाद की आवश्यकता मौखिक भाषा में रहती है जबकि लिपिबद्ध भाषा में अनुवाद की आवश्यकता और भी अधिक हो जाती है। अनुवाद लिपिबद्ध हो या मौखिक, वक्ता और श्रोता के बीच में अथवा लेखक और पाठक के बीच में एक मध्यस्थ की आवश्यकता रहती है जिसे हम दुभाषिया या अनुवादक कहते हैं। अतः यह तो स्पष्ट है कि जिस भाषा में अनुवाद अपेक्षित है उसे हम मूल या स्रोत

भाषा कहते हैं तथा जिसमें अनुवाद किया जाता है, उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं। इससे प्रतीत होता है कि अनुवाद प्रक्रिया में भाषा का विशेष महत्त्व रहता है।

अनुवाद के आरंभ के संदर्भ में 'बैबेल' की दिलचस्प कहानी प्रचलित है। इसके अनुसार ऐसा माना जाता है कि आरंभ में दुनिया के सभी लोग एक ही भाषा बोलते थे। इसलिए सब एक दूसरे की बात समझते थे। एक दिन कुछ लोगों ने मिलकर एक विशाल निर्माण कार्य करने के बारे में सोचा और एक ऊँची मीनार बनाना शुरू किया। मीनार लगातार ऊँची बढ़ती देख स्वर्ग में बैठे देवताओं को खतरा महसूस हुआ। उन्होंने इस समस्या का बहुत ही चतुराई पूर्ण समाधान खोजा। उन्होंने मीनार बनाने वाले लोगों को अलग–अलग भाषाएं दे दीं। परिणाम यह हुआ कि एकजुट लोग विभाजित हो गए। सब अपना–अपना राग अलापें, कोई किसी की बात ही न समझ पाए। एक–दूसरे से संवाद ही टूट गया तो संगठित होकर मीनार बनाने का काम कैसे चलता। फलतः निर्माण कार्य रुक गया और अजीब खलबली का कोलाहल पैदा हो गया। मीनार अधूरी रह गई। इस अधूरी मीनार को बैबेल की मीनार कहा गया। बैबेल की मीनार की यह घटना जहां मानवीय संप्रेषण पर हुआ कुठाराघात मानी जाती है वहीं यह अनुवाद के आरंभ का हेतु बनती है क्योंकि मनुष्य अलग–अलग भाषाएं तो बोलने लगा लेकिन उसे आपस में संपर्क करने के लिए भाषान्तरण अथवा अनुवाद की जरूरत पड़ी। भिन्न–भिन्न भाषाओं को बोलने वाले आदिम मनुष्यों के समूहों या कबीलों का जब एक दूसरे से संपर्क हुआ होगा, उनमें परस्पर प्रीति और बैर के संबंध विकसित हुए होंगे वहीं से अनुवाद के मौखिक रूप की शुरुआत मानी जा सकती है। अनुवाद का लिखित रूप भी लगभग भाषा के लिखत रूप के साथ–साथ ही चला होगा और पत्थर पर बने शिलालेखों से होता हुआ कागज पर अंकित हुआ होगा।

पश्चिम में अनुवाद सिद्धांत चिंतन परंपरा के संदर्भ में कहा जा सकता है कि अनुवाद प्राचीनकाल से ही अस्तित्व में है। बीसवीं शताब्दी तक आते–आते तो अनुवाद, हमारी अनिवार्य आवश्यकता बन गया था। इस दिशा में व्यवस्थित कार्य करने का श्रेय पाश्चात्य अनुवाद–सिद्धांतकार एलेग्जैंडर फ्रेज़र टिटलर को जाता है। डॉ0 पूरनचंद टंडन के अनुसार– ''पश्चिम में यह अनुवाद–परंपरा, पिछले दो हजार वर्षों से निरंतर तथा सतत रूप से कार्यरत और सजीव रही है। परंतु अनुवाद कला–विषयक पुस्तक–पुस्तिकाएं सन् 1791 से ही प्रकाशित होनी प्रारंभ हुईं। इसी सन् में अनुवाद सिद्धांत पर पहली व्यवस्थित पुस्तक 'ऐस्सेज़ ऑन द प्रिंसिपल्स ऑफ ट्रांसलेशन' प्रकाशित हुई जिसके लेखक एलेग्जैंडर फ्रेज़र थे।

भारत में 19वीं शताब्दी के अंतिम कुछ दशकों से ही अनुवाद–कर्म एवं अनुवाद चिंतन विषयक मौलिक दृष्टि का सृजन हुआ है, प्रचार–प्रसार हुआ है। भारतीय विद्वानों द्वारा अनुवाद विषयक सैद्धांतिक चिंतन पर श्री आर0 रघुनाथ राव की 1910 में प्रकाशित अनुभव–जन्य कृति 'द आर्ट ऑफ ट्रांसलेशन–ए क्रिटिकल स्टडी' के बारे में नई दिल्ली स्थित स्वयंसेवी संस्था भारतीय अनुवाद परिषद के माध्यम से ज्ञात हुआ है। इस कृति में संस्कृत, अंग्रेजी एवं कन्नड़ भाषाओं के परिप्रेक्ष्य में उन समस्याओं के समाधान ढूंढने के वैज्ञानिक प्रयास किए गए हैं, जिनसे आज भारतीय अनुवादक एवं अनुवाद–विद जूझ रहे हैं। जहां तक हिंदी भाषा के परिप्रेक्ष्य में अनुवाद–चिंतन का संबंध है, भारत सरकार के तत्कालीन वैज्ञानिक अनुसंधान और सांस्कृतिक कार्य मंत्रालय ने The Art of

Translation' (अनुवाद कला) पर एक संगोष्ठी आयोजित की थी। इस संगोष्ठी में पढ़े गए आलेखों को जून, 1961 एवं अक्टूबर, 1961 के Cultural Forum' अंक में प्रकाशित किया था। इसी मंत्रालय ने 'संस्कृति' नामक त्रैमासिक पत्रिका के अंकों में इन आलेखों के 'रूपांतर' प्रकाशित किए थे।

अनुवाद विधा पर हिंदी में मौलिक पुस्तकों के अभाव को दूर करने की दिशा में भारतीय अनुवाद परिषद् ने विशेष भूमिका निभाई है। परिषद् ने पुस्तक प्रकाशन की योजना तैयार कर, अनेक लेखकों को अनुवाद सिद्धांत चिंतनपरक मौलिक लेखादि लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। इन सत्प्रयासों की परिणति यह रही कि हिंदी में स्वतंत्र पुस्तक के रूप में संभवतः सबसे पहली पुस्तक 'अनुवाद–कलाः कुछ विचार' 1964 में प्रकाशित हुई। तत्पश्चात् डॉ0 वासुदेव नंदन प्रसाद द्वारा सन् 1966 में लिखित पुस्तक ' 'हिंदी अनुवादःसिद्धांत और प्रयोग' प्रकाश में आई।

शोध प्रविधिः

प्रस्तुत शोध पत्र अनुवाद प्रक्रिया के स्वरूप, विभिन्न समस्याओं एवं समाधान जैसे महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर प्रकाश डालता है। शोध पत्र के प्रथम चरण में अनुवाद के अर्थ, परिभाषा तथा पूर्वपीठिका आदि को दर्शाया गया है। दूसरे चरण में अनुवाद के क्षेत्र में आ रही विभिन्न प्रकार की व्यावहारिक समस्याओं एवं उनके समाधान का प्रयास किया गया है जबकि तीसरे चरण में अनुवाद की आवश्यकता, क्षेत्र एवं संभावनाएं उल्लिखित हैं। उक्त शोध पत्र में सर्वेक्षण विधि को अपना कर सामग्री एकत्रित की गई है।

अनुवाद : अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूपः अनुवाद शब्द 'अनु' उपसर्ग तथा 'वाद' शब्द के संयोग से बना है– अनु+वाद –अनुवाद। 'अनु' उपसर्ग का अर्थ होता है पीछे या अनुगमन करना तथा 'वाद' शब्द का संबंध है 'वद्' धातु से, जिसका अर्थ होता है कहना या बोलना। इस प्रकार अनुवाद शब्द का शाब्दिक अर्थ होगा किसी के कहने या बोलने के बाद बोलना। पाणिनी ने अपनी अश्टाध्यायी में 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग किसी ज्ञात बात को कहने के संदर्भ में किया है– ''अनुवादे चरणानाम्''। भर्तृहरि ने भी 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग दुहराने या पुनर्कथन के अर्थ में ही किया है– ''आवृत्तिरनुवादों वा''। जैमिनीय न्यायमाला में भी अनुवाद को ज्ञात का पुनर्कथन ही माना गया है– ''ज्ञातस्य कथनमनुवादः''। इस प्रकार कहा जा सकता है कि अनुवाद में हम एक भाषा में कही गई बात को उसके कहे जाने के बाद दूसरी भाषा में कहते हैं। एक भाषा में व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में व्यक्त करना अनुवाद का कार्य है।

विद्वानों ने अनुवाद की थोड़े बहुत अंतर के साथ अलग–अलग परिभाषाएं दी हैं। 'नाइडा' के अनुसार– ''अनुवाद का तात्पर्य है स्रोत भाषा में व्यक्त संदेश के लिए लक्ष्य भाषा में निकटतम सहज समतुल्य संदेश को प्रस्तुत करना। यह समतुल्यता पहले तो अर्थ के स्तर पर होती है फिर शैली के स्तर पर।'' इसी प्रकार 'कैटफोर्ड' के अनुसार– ''एक भाषा की पाठ्य सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्य सामग्री से प्रतिस्थापित करना ही अनुवाद है।''

आज 'अनुवाद' एक स्वतंत्र विषय एवं महत्त्वपूर्ण विधा के रूप में न केवल अपना विशेष स्थान बना चुका है बल्कि उसका व्यवस्थित ढंग से उत्तरोतर विकास भी होता जा रहा है। किसी भी देश–समाज की साहित्यिक और सांस्कृतिक उत्कृष्टता का दर्पण मौलिक सृजन के समान अनुवाद भी

होता है। विश्व सभ्यता के विकास में अनुवाद की सराहनीय भूमिका रही है। यह भूमिका साहित्य, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र तक ही नहीं, अपितु सामाजिक–सांस्कृतिक और अन्य कई संदर्भों में भी सराहनीय रही है, क्योंकि अनुवाद ही वह एकमात्र माध्यम है जिसकी सहायता से विभिन्न सभ्यताओं और संस्कृतियों, धर्मों एवं सामाजिक स्तरों से देश–विदेश में संवाद स्थापित हो पाता है।

आज के इस वैज्ञानिक युग में, विज्ञान के क्षेत्र में अनेकानेक भाषा ओं में जो निरंतर चिंतन–मनन, अध्ययन–अनुसंधान और लेखन–कार्य हो रहा है उसे अन्य भाषा –भाषियों तक पहुंचाने के लिए भिन्न–भिन्न भाषा ओं में उसके अनुवाद की आवश्यकता होती है क्योंकि संपूर्ण विश्व में ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में हो रही संवृद्धि और अद्यतन जानकारी आदि को अन्य भाषाओं में 'अनुवाद' के माध्यम से जाना जा सकता है। इसी प्रकार कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक आदि सृजनात्मक साहित्य की देश अथवा समाज–विशेष की सांस्कृतिक संपदा का बोध हमें तब तक नहीं हो पाता जब तक कि उन समस्त श्रेष्ठ कृतियों का अपनी भाषा में अनुवाद न उपलब्ध हो। वैसे एक ही देश की भौगोलिक सीमा के भीतर कई स्वीकृत व्यावहारिक भाषाओं के कारण भी अनुवाद की आवश्यकता दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। इस प्रकार अनुवाद की मूल चेतना के परिप्रेक्ष्य में देखें तो अनुवाद विभिन्न भाषा –भाषियों के बीच परस्पर विचार–विनिमय का 'माध्यम' है, दो भाषाओं के बीच 'संपर्क सूत्र' है।

प्रकृति के आधार पर अनुवाद के दो मुख्य प्रकार हैं– शब्दानुवाद और भावानुवाद। शब्दानुवाद में मूल रचना के प्रत्येक शब्द का अनुवाद होता है। जैसे अंग्रेजी वाक्य–I have some work at home का हिंदी में 'मुझे घर में कुछ काम है'। शब्दानुवाद में किसी रचना के भारीर पर ध्यान न देकर उसकी आत्मा पर ही ध्यान रहता है। भावानुवाद में शब्द, वाक्य आदि पर ध्यान नहीं दिया जाता है। मूल रचना के भाव पर ही विशेष महत्त्व दिया जाता है और अनुवादक अपने अनुसार उस भाव को अनुवाद कर देता है। भावानुवाद में मूल लेखक का व्यक्तित्व पीछे रह जाता है और अनुवादक का व्यक्तित्व उभर आता है।

भावों की अभिव्यक्ति के दो माध्यम हैं– क्रियात्मक अभिव्यक्ति और भाषिक अभिव्यक्ति। क्रियात्मक अभिव्यक्ति में मनुष्य अपने भावों को शारीरिक क्रिया के माध्यम से किसी दूसरे मनुष्य को अभिव्यक्त करता है। उदाहरणार्थ– खुशी, दुःख, क्रोध आदि में अमुक व्यक्ति की शारीरिक क्रियाएं अभिव्यक्ति में सहायक बनती हैं। यहां कोई भाषा की जरूरत नहीं पड़ती। दूसरा माध्यम है– भाषिक अभिव्यक्ति, जो इतनी सहज नहीं है। इस प्रकार की अभिव्यक्ति के लिए बहुत परिश्रम करना पड़ता है। उदाहरणार्थ– अपनी मातृभाषा की आंशिक अभिव्यक्ति के लिए भी एक बालक को दो से अधिक वर्ष लगते हैं। अपनी मातृभाषा की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए व्यक्ति को बहुत परिश्रम करना पड़ता है। फिर दूसरी भाषा की बात तो और ही है।

अनुवाद : समस्याएं एवं समाधानः अनुवाद में स्रोत भाषा के मूल स्वरूप को सुरक्षित रखने के लिए अनुवादक को अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता है। इनमें सांस्कृतिक पक्ष महत्त्वपूर्ण है। भौगोलिक तथा ऐतिहासिक कारणों से सांस्कृतिक अन्तर होता है। मूल के सत्य को सुन्दरता से सुरक्षित रखना अनुवादक का कर्त्तव्य है। यह असम्भव नहीं तो कम–से–कम कष्टकर अवश्य है। अनुवाद की प्रमुख समस्याओं में भाषावैज्ञानिक समस्याएं, संस्कृति सम्बन्धी समस्याएं तथा साहित्यिक

अनुवाद की समस्याएं शामिल हैं। चूंकि अनुवाद का सीधा सम्बन्ध 'अनुवादक' से है अतः अनुवादक की समस्याओं पर प्रकाश डालना भी समीचीन रहेगा। अनुवादक का कार्य बहुत जटिल और श्रम–साध्य होता है। उसको विभिन्न विषयों से सम्बन्धित सामग्री का अनुवाद करना पड़ता है। यहां अनुवाद के क्षेत्र में आने वाली अनुवादक की कुछ समस्याओं का संक्षिप्त उल्लेख किया जा रहा है। अनुवादक की प्रमुख समस्याओं में–

1. मूल कृति की भाषा का अल्पज्ञान,
2. अनुवाद भाषा का पूर्ण ज्ञान न होना,
3. उपयुक्त पर्यायों के चयन की समस्या,
4. सीमा एवं समयाभाव तथा
5. निर्देश पुस्तकों की कमी आदि।

हालांकि उपर्युक्त प्रत्येक समस्या का समाधान है। अनुवादक के लिए अध्ययन, पठन–पाठन उतना ही आवश्यक है जितना किसी डाक्टर या वकील के लिए नयी–नयी खोजों, दवाइयों, बीमारियों या उच्च न्यायालयों की व्यवस्थाओं, निर्मित नये–नये कानूनों की जानकारी रखना। साथ–ही–साथ उसके पास पर्याप्त सहायक साहित्य सामग्री भी होनी जरूरी है। संदर्भ पुस्तकों, ग्रंथों और कोशों के क्रय के लिए अलग से प्रावधान होना चाहिए तथा प्रामाणिक हिन्दी–हिन्दी कोश, अंग्रेजी–हिन्दी और हिन्दी–अंग्रेजी कोश भी उपलब्ध होने चाहिए तभी हम अनुवादक से सही और अच्छे अनुवाद की अपेक्षा कर सकते हैं।

अनुवादः महत्त्व एवं प्रासंगिकताः

आज विश्व की बदलती हुई परिस्थितियों में अनुवाद का महत्त्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। वस्तुतः अब 'विश्व एक इकाई' हो गया है। अनुवाद के द्वारा अन्य भाषाओं के साहित्य– गद्य एवं पद्य से तो परिचित होते ही हैं साथ–ही–साथ अन्य देशों के विचार, अनुसंधान कार्य, राजनीतिक हलचल, सामाजिक–सांस्कृतिक विचारधाराएं भी प्राप्त होती हैं। आवश्यकता है कि विश्व की सभी भाषाओं के जानकार हमारे देश में हों जिससे जब जिस भाषा से अनुवाद की आवश्यकता हो, करवाया जा सके। दूर–दूर सीमाओं में बंटी मानव–जाति अनुवाद के माध्यम से समीप आती जाती है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास के साथ–साथ सूचना का महत्त्व बढ़ा है। विज्ञान के क्षेत्र में खोजों की जानकारी वैज्ञानिक तुरंत पाना चाहते हैं। जिस भाषा में वह उपलब्ध है उसे तुरंत अपनी भाषा में पाने के लिए उन्हें अनुवाद (अनुवादक) की जरूरत पड़ती है। आज के युग को यदि अनुवाद का युग कहें तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। सोच और व्यवहार के हर स्तर पर हम अनुवाद पर आश्रित हैं, अनुवाद के आग्रही हैं। शायद ही जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र हो, जिसमें अनुवाद की उपादेयता प्रमाणित न की जा सके। अपरिहार्य तौर पर अनुवाद एक व्यापक और प्रासंगिक स्थिति है। इसलिए यह सर्वथा स्वाभाविक ही है कि नए संसाधनों के विकास और व्यापकता मानवीय संपर्कों के संदर्भ में अनुवाद के महत्त्व, प्रासंगिकता और भविश्य का अनुशीलन किया जाए। संसार भर में प्रयुक्त पांच हजार से अधिक भाषाओं और बोलियों के बीच वैचारिक, सर्जनात्मक और कार्यात्मक तालमेल स्थापित रखने के लिए अनुवाद ही सर्वाधिक लोकप्रिय एवं उपयोगी माध्यम बन गया है। आज राष्ट्रीय एकता में, सामसिक संस्कृति के विकास में, भारतीय साहित्य के अध्ययन में, अंतर्राष्ट्रीय साहित्य के अध्ययन–अध्यापन में, तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में, व्यवसाय के क्षेत्र में, प्रशासनिक क्षेत्र में, जन–संचार माध्यमों में तथा शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद का महत्त्व देखा जा सकता है।

अनुवाद प्राचीन और नये के बीच कड़ी स्थापित करता है और एक देश और दूसरे देश अथवा एक देश के एक अंचल और दूसरे अंचल के मध्य सेतु का काम करता है। अनुवाद की आवश्यकता पर यदि बात करें तो स्पष्टतया कहा जा सकता है कि अनुवाद का संबंध एक भाषा विशेष की सुरक्षित सामग्री को दूसरी भाषा में प्रस्तुत करने से होता है। जब हम अन्य समाज की संस्कृति, सभ्यता आदि से परिचित होना चाहते हैं, जानना चाहते हैं कि वे हमसे कितने आगे या पीछे हैं। उनकी संस्कृति, विचार हमसे कितनी भिन्न हैं। उक्त समाज ने प्रगति के लिए किस पद्धति को अपनाया? तब अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। जब दो विविध भाषा–भाषी परस्पर बातचीत के लिए उपस्थित हों और एक दूसरे की भाषा की जानकारी न हो तो उन्हें अपनी बात एक दूसरे को समझाने के लिए भाषान्तरकार–दुभाषिया का सहारा लेना पड़ता है। अतः अनुवादक ही दोनों भाषाओं का अच्छा जानकार होता है। राजनैतिक वार्ताओं, अनेक देशों के प्रतिनिधियों के बीच बातचीत के मध्य इस प्रकार के भाषान्तरकार की आवश्यकता पड़ती है। संसार की प्रमुख भाषाओं– अंग्रेजी, चीनी, जापानी, जर्मन, फ्रांसीसी, रूसी, अरबी से अनुवाद की निरन्तर आवश्यकता बनी रहती है।

इसके अतिरिक्त यदि हम अनुवाद की संभावनाओं की बात करें तो इसमें जो क्षेत्र शामिल हैं उनमें–

1. दूसरे देशों द्वारा किया गया शोधकार्य,
2. भारतीय तथा प्रमुख–प्रमुख देशों के साहित्य की जानकारी,
3. विधि/न्याय सम्बन्धी निर्णयों की जानकारी,
4. व्यापारिक क्षेत्र में आदान–प्रदान,
5. विश्व की प्रमुख संस्कृतियों का परिचय,
6. कार्यालयीन द्विभाषिकता,
7. पर्यटन– देश तथा विदेश के सन्दर्भ में,
8. विश्व की श्रेष्ठ कृतियों का ज्ञान,
9. अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन,
10. सामान्य ज्ञान एवं पत्रकारिता का क्षेत्र शामिल है। इसके अतिरिक्त विश्व के विविध देशों में परस्पर वैचारिक स्तर पर आदान–प्रदान आदि के क्षेत्रों में भी अनुवाद की पर्याप्त संभावनाएं मौजूद हैं।

निष्कर्षः

आज अनुवाद प्रयोजन की दृष्टि से बहुमुखी और बहुआयामी बन चुका है। अनुवाद अन्य भाषा और मानव समुदाय में संचित विकसित ज्ञान–विज्ञान के आयात का माध्यम बन गया है। यह आज देश विदेश के राजनीतिक जीवन की अनिवार्यता भी बन गया है। अनुवाद का भारत जैसे देश में बहुत ही महत्त्व है। भाषिक दृष्टि से देखें तो यहां भाषा को लेकर समस्या ही समस्या है। हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है किंतु अंग्रेजी ने अपना स्थान तक नहीं छोड़ा। लेकिन यह भी सच है कि यदि हम मातृभाषा या राष्ट्रभाषा तक ही सीमित रह गए तो हमें विश्व की जानकारी नहीं होगी और अपना कुछ विश्व को भी नहीं दे पाएंगे। संप्रेषण–सेतु अनुवाद, आधुनिक विश्व की अपरिहार्य आवश्यकता बन गया है। इसीलिए आदान–प्रदान के इस सशक्त माध्यम को सांस्कृतिक एकीकरण करने वाले 'सांस्कृतिक सेतु' की संज्ञा दी गई है। वस्तुतः अनुवाद के माध्यम से ही विश्व–साहित्य, संस्कृति, प्रगति, परंपराओं और रीति–रिवाज आदि की परस्पर जानकारी संभव है। भूमण्डलीकरण के चलते जिस प्रकार संसार के देशों का आपसी संपर्क बढ़ा है, आज अनुवादक का करियर भी संभावनाओं से लबरेज़ हो चुका है। अनुवाद के क्षेत्र में पहले करियर की सीमित संभावनाएं

थी, लेकिन अब दुनिया की कई भाषाओं– अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी, चीनी, जापानी, तथा जर्मन आदि में बड़ी अच्छी संभावनाएं पैदा हुई हैं। आज शिक्षण संस्थानों, पर्यटन, पत्रकारिता, सरकारी कार्यालयों, बैंकों तथा न्यायालयों आदि में अनुवाद की पर्याप्त संभावनाएं हैं। आज अपेक्षा की जा रही है कि विश्व एक इकाई बन सके, सभी देशों का भूमंडलीकरण हो। आज 'अनुवाद' ही एकमात्र ऐसा विकल्प दिखाई देता है जो विश्व की एकता को भाषित कर सकता है, पूरे विश्व की मौन वाणी को स्वर प्रदान कर सकता है। 'अनुवाद' को विश्व की संपर्क – भाषा के रूप में स्थापित करने की यही बेला है। आजादी के बाद से लेकर आज तक अनुवाद ने इस दिशा में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अतः अनुवाद को विश्व की एक संपर्क–भाषा के रूप में मान्यता देते हुए इसके प्रति विशिष्ट रूझान पैदा करना, इसे दिनोंदित प्रोत्साहन देना और इसके प्रति एक सामाजिक–दायित्व का अनिवार्य निर्वाह करना आज की सबसे बड़ी आवश्यकता जान पड़ती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अनुवाद मात्र एक साहित्यिक कार्य नहीं है, अपितु उसकी पहचान जीवन के हर क्षेत्र में सक्रिय साधन के रूप में उभरी हे। प्रशासन, चिकित्सा, कला, संस्कृति, विज्ञान, प्रतिरक्षा, विधि, प्रौद्योगिकी, तकनीकी अनुसंधान, व्यवसाय, पत्रकारिता, जनसंचार आदि विभिन्न क्षेत्रों में अनुवाद के बिना कुछ नहीं हो सकता। भारत जैसे बहुभाषी और विविधताओं से भरे देश में राष्ट्रीय एकता के सूत्रों को समेटने में भी अनुवाद की अपनी विशिष्ट भूमिका है। भारत की सामासिक संस्कृति के अवगाहन में भी अनुवाद कारगर है। भारतीय एवं अंतर्राष्ट्रीय साहित्य के अध्ययन–अध्यापन में अनुवाद की उपादेयता असंग्दिध है। इसी तरह साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन और अनुसंधान की विभिन्न दिशाएं अनुवाद से ही नियंत्रित होती हैं। क्रमशः अनुवाद एक स्वतंत्र व्यवसाय एवं आजीविका का साधन बन गया है। ज्ञान–विज्ञान, औद्योगिक विकास और वाणिज्य–व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में अनुवाद के व्यापक उपयोग ने इसे अधिकाधिक लोकप्रिय बनाया है। बहुभाषी देश भारत में बहुभाषी शिक्षा प्रणाली की संभावनाओं के साथ भी अनुवाद का गहरा रिश्ता है। इन सबने मिलकर अनुवाद की विश्वव्यापी, उपादेयता, प्रासंगिकता और भविष्य को रेखांकित किया है। आने वाले दिनों में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय फलक पर अनुवाद का महत्त्व उत्तरोत्तर विस्तृत होगा। अनुवाद आज की आवश्यकता है और भविष्य की अपरिहार्यता के रूप में अनुवाद की संभावनाएं असीम हैं।

आभार और संदर्भः

1. तिवारी, भोलानाथः अनुवाद विज्ञान, शब्दकार, दिल्ली।
2. पालीवाल, रीतारानीः अनुवाद प्रक्रिया, साहित्यनिधि, दिल्ली।
3. भाटिया कैलाशचन्द्रः अनुवाद कलाः सिद्धांत और प्रयोग, तक्षशिला प्रकाशन, 23/4762, अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली–2 (संशोधित संस्करण– 1991)
4. मान नीलमः अनुवाद का मानक स्वरूप, तक्षशिला प्रकाशन, 98–ए, हिन्दी पार्क, दरियागंज, नई दिल्ली–2 (प्रथम संस्करण– 2005)
5. राजभाषा भारतीः अंक 129 (अप्रैल–जून, 2010), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
6. राजभाषा भारतीः अंक 130 (जुलाई–सितम्बर, 2010), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
7. राजभाषा भारतीः अंक 131 (जुलाई–सितम्बर, 2011), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
8. सक्सेना प्रदीपः अनुवाद सिद्धांतिकी, आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, एस.सी.एफ. 267,

सैक्टर–16, पंचकुला–134113 (प्रथम संस्करण–2000)

9. सेठी हरीश कुमार : ई–अनुवाद और हिंदी, किताबघर प्रकाशन, 24/4855, अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली–2 (प्रथम संस्करण–2009)

10. श्रीवास्तव गोपीनाथ : कार्यालयी अनुवाद निदेशिका, सामयिक प्रकाशन, 3543, जटवाड़ा, दरियागंज, नई दिल्ली–2 (प्रथम संस्करण–1989)